
श्री १०८
मठ
पुस्तकालय,
भवन, अस्सी, काशी.

ओं

महिम्नछायारत्न

अर्थात्

पुष्पदन्तगंधर्वराज कृतशिवस्तोत्र का
अनुवाद भाषाछन्दोंमें

जिसको

पंडित राम प्रसाद तिवारी प्रयाग निवासी ने
बड़े श्रम से बनाया

बाबू श्यामलाल मनेजर साहित्य
सहायिनी सभा प्रयाग ने प्रकाशित किया
काशी तिमिर नाशक प्रेस में छपा

सन् १८९१

पहिलीबार   दाम की पुस्तक ≡)॥

२००० पुस्तक   डाक महसूल)॥

भूमिका ॥

इस परम पुनीत जगद्विख्यात शिव महिम्न बनाने की कथा बहुत दिनों से संसार मे इस प्रकार प्रसिद्ध है कि एक पुष्पदन्त नामी गंधर्वराज शिव जी के बड़े भक्त थे वह शिव पूजा के लिये वाहु नामी राजा की फुलवारी से अच्छे २ फूल लेकर आकाश को उड़ जाते थे यह बात फुलवारी के नौकरों को किसी प्रकार विदित न होती थी और अपूर्व फूलों के न पाने के कारण राजा नित्य नौकरों की ताड़ना करत

अन्त को नौकरों ने यह विचार दृढ़ किया कि इन फूलों को कोई आकाशचारी देवता ले जाता है कि जिसको हम लोग किसी प्रकार नहीं पकड़ पाते सो उन्हों ने किसी चतुर के उपदेश से शिव जी का निर्माल्य फूल बिल्वपत्रादि फुलवारी मे चारों ओर छीट दिया जब गन्धर्व राज का पांव अंधेरे में शिव निर्माल्य पर पड़ा उसी दोष से उसकी खेचरी शक्ति जाती रही सबेरे राजा के नौकरों ने पकड़ कर नृपाज्ञा से बंदि मे डाल दिया अन्त को गन्धर्व राजने एकाग्र चित्त होकर भक्ति भावसे यह अपूर्व स्तोत्र

बनाया कि जिस से आशुतोष भगवान् प्रसन्न होकर उन्हें फिर खेचरी सिद्धि दी और वे बंधन से छूट अपने गंधर्व लोक को प्राप्त हुए ॥

इस स्तोत्र के शब्द और भावार्थ दोनों बहुत कठिन हैं किसी २ ने वार्त्ता में अर्थ लिखे हैं पर न वह अर्थ ठीक न उस के पढ़ने से कुछ आनन्द आवे और न कंठस्थ हो सके पढ़ने के पीछे सब बातें उचट जाती हैं इस लिये बहुत दिनों के श्रम और विचार के पश्चात् श्री पार्वती वल्लभ के कृ-पावलम्ब से इस छाया रत्न की पूर्णता हो

गई प्रत्येक श्लोक और उन के भाव उसी छन्द मे वनाये गये कि जिससे भक्त लोग कंठगत करके पाठ और अर्थज्ञान का लाभ एक साथ उठा सकें ऊपर मूल संस्कृत भी रक्खा गया है कि जो संस्कृत जानते हैं वह दोनों को पढ़ते जाँय और जो संस्कृत नहीं जानते वह केवल भाषाही को क्रम से पढ़-ते जांय - जहां कहीं भूल चूक देख कर विद्वान् लोग ठीक करने की शिक्षा देंगे वह दूसरी आवृत्ति में शुद्ध करके छाप दी जायंगी -

रामप्रसाद तिवारी

श्रीगणेशायनमः । श्री रामो विजयते

शिवमहिम्नःस्तोत्रम् ।

मूल

महिम्नः पारन्ते परमविदुषो यद्यसदृ-
शी स्तुतिर्ब्रह्मादीनामपि तदवसन्ना-
स्त्वयि गिरः॥ अथावाच्यः सर्वः स्वम-
तिपरिणामावधिगृणन् ममाप्येषस्तो-
त्रे हर निरपवादः परिकरः ॥ १ ॥

छाया

तिहारी महिमा की विकट गहरी छोर ठ-
हरी अनारी क्या जानै जहँ विरँचि बानी
थकित है । इसी से सब कोऊ कहि सकत
अपनी समझ भर हमारी विनती में हर-
जनि लगै दूषण कछू ॥ १ ॥

अतीतः पन्थानं तव च महिमा वा-
ङ्मनसयो रतद्व्यावृत्त्यायं चकित-
मभिधत्ते श्रुतिरपि ॥ स कस्य स्तो-
तव्यः कति विधगुणः कस्य विषयः पदे
त्वर्वाचीने पतति न मनः कस्य न व-
चः ॥ २ ॥

छाया

तिहारी महिमा जो उलँघि मनबानी ड-
गर को गई ऐसे थाने जहँ श्रुति पता बिन
चकित है ॥ बखानै क्या कोई त्रिषय बिनु
जाने गुन घने अनोखी मूरत मे वचन चि-
त न काको रमत है ॥ २ ॥

मधुस्फीता वाचः परमममृतं निर्म्मि-
तवत स्तव ब्रह्मन् किम्वागपि सुरगु-
रोर्विस्मयपदम् ॥ ममत्वेतां वाणीं गु-
णकथनपुण्येन भवतः॥ पुनामीत्यर्थे
स्मिन् पुरमथन बुद्धिर्व्यवसिता ॥३॥

छाया

महा मीठी बानी अमृत रस सानी तुम र-
ची कि जाके वर्णन में सुरगुरु गिरा विस्मित
रहै ॥ तुम्हारो गुन गा के वचन अपनो पा-
वन करूं॥ तभी या धंधा मे पुरमथन मेरी
मति भिड़ी ॥ ३ ॥

तवैश्वर्य्यं यत्तज्जगदुदयरक्षाप्रलयकृ-
त्॥ त्रयी वस्तुव्यस्तं तिसृषु गुण-
भिन्नासु तनुषु॥ अभव्यानामस्मिन्व-
रद रमणीयामरमणीं॥ विहन्तुं व्या-
क्रोशीं विदधत इहैके जडधियः॥ ४॥

छाया

तिहारी विभुताई भव विभव संहार क-
रनी बटी न्यारे न्यारे त्रिगुन मय तीनों वपुष में
उसीके मेटन को कुतरक अभागे रचत हैं॥ नि-
कम्मी निन्दायें वरद जड़ बुद्धी करतु हैं॥ ४॥

किमीहः किं कायः स खलु किमुपाय
स्त्रिभुवनं॥ किमाधारो धाता सृजति
किमुपादानइति च ॥ अतर्क्यैश्वर्य्ये
त्वय्यनवसरदुःस्थो हतधियः कुतर्कोऽयं
कांश्चिन्मुखरयति मोहाय जगतः॥५॥

छाया

विधाता है कैसा कहैं रहत कैसे जतन
सों मसाला क्या लेकर सृजत किमि तीनों
भुवन को ॥ अनारी ऐसेही तव अगम ऐ-
श्वर्य्य पद में जगतके ठगने को कुतरक कु-
मुद्धी करतु हैं ॥ ५ ॥

अजन्मानो लोकाः किमवयववन्तोऽपि जगतामधिष्ठातारं किं भवविधिरनादृत्य भवति ॥ अनीशो वा कुर्याद् भुवनजनने कः परिकरो यतो मंदास्त्वां प्रत्यमरवरसंशेरत इमे॥६॥

छाया

कभी तो उपजे हैं भुवन सब अँगों से लसत।
बिना कर्ताहूके कहुँ जगत आपै बनतु है ॥
प्रभू बिन क्या कोऊ अपर वसुधा को रचि सकै तो फिर क्यों हत्यारे तव ढिंग महासंशय करैं ॥ ६ ॥

त्रयी सांख्यं योगः पशुपति मतं वैष्ण-
वमिति॥ प्रभिन्ने प्रस्थाने परमिदमदः
पथ्यमिति च॥ रुचीनां वैचित्र्यादृजु-
कुटिलनानापथजुषां॥ नृणामेको ग-
म्यस्त्वमसि पयसा मर्णव इव ॥ ७॥

छाया

पढ़ैया वेदों के पशुपतिव्रती वैष्णव मती
कपिल औ पातञ्जल निजमत्त बड़ाई
करत्त हैं॥चलैं टेढ़े सीधे डगर जन नाना रुचि
लिये॥ शरण तुम हो सबके जिमि नदि नदों
के समुद्र है ॥ ७॥

महोक्षः खट्वाङ्गं परशुरजिनं भ-
स्म फणिनः कपालं चेतीयत्तव वरद
तंत्रोपकरणम्॥ सुरास्तां तामृद्धिं वि-
दधति भवद्भ्रू प्रणिहितां नहि स्वा-
त्मारामं विषयमृगतृष्णा भ्रमयति८

छाया

बड़ाबूढ़ा बरधा नरशिर कठासन भसम को
लिये गोला टांगा सरप मृगछाला उपकर-
न ॥ लहैं ऋद्धी सिद्धी सुरगण सु भौंके भँव
त ही विषय की मृगदृष्णा नहिं कबहु व्या
प्रभुन पैं॥८॥

ध्रुवं कश्चित् सर्वं सकलमपरस्त्वध्रु-
वमिदं परो ध्रौव्याध्रौव्ये जगति गदति-
व्यस्तविषये॥ समस्तेप्येतस्मिन्पुरम
थन तैर्विस्मित इव स्तुवन् जिह्रेमि-
त्वां न खलु ननु धृष्टा मुखरता ॥९॥

छाया

जगत को नित कोऊ कोउ अनित भाखैं
फिर कोऊ कहैं इस दुनिया में नित अनित
दोनों मिलित हैं ॥ इन्हीं सब बातों से पुर-
मथन मैं लज्जित चकित ढिठाई जिव्हा की
स्तुति यह तुम्हारी करतुहौं ॥ ९ ॥

तवैश्वर्य्यं यत्नाद्यदुपरि विरंचिर्हरिरधः॥परिच्छेतुं यातावनल मनिलस्कन्धवपुषः॥ततो भक्तिश्रद्धाभरगुरुगृणद्भ्यां गिरिश यत॥स्वयं तस्थे ताभ्यां तव किमनुवृत्तिर्न फलति ॥१०॥

छाया

पवन तेजो मूर्तें तव परम ऐश्वर्य्य पद को चले परखन ब्रह्मा उपर हरिनीचे दोउ थके जभी श्रद्धाभक्ती युत भजन ठाने तुम मिले किये हरकी सेवा अवशि वर मेवा फलति है ॥ १० ॥

अयत्नादासाद्य त्रिभुवनमवैरव्यति-
करं" दशास्यो यद्बाहूनभृतरणकंडूपर-
वशान् ॥ शिरःपद्मश्रेणीरचितचरणांभोरुहवले" स्थिरायास्त्वद्भक्तेस्त्रिपुरहर
विस्फूर्जितमिदम् ॥ ११ ॥

छाया

सहज मे करडाले बिन बैर तीनों भुवन
को" बली रावन धारेया रण चहन हारे भुजन
को ॥ चढ़ाई शीसों की रचि कमल माला च-
रण में" प्रगट फल सब जानै त्रिपुर हर सेवा
अचलको ॥ ११ ॥

अमुष्य त्वत्सेवासमधिगतसारं भुज-
वलं बलात्कैलासेपि त्वदधिवसतौ वि-
क्रमयतः ॥ अलभ्यापातालेप्यलसच-
लितांगुष्ठशिरसि ॥ प्रतिष्ठा त्वय्यासी-
द्ध्रुवमुपचितो मुह्यति खलः ॥ १२ ॥

छाया

तिहारी सेवाते भुज सकति पाके गरबसौं
उठाना जब चाह्यौ दसवदन कैलास गिरि
अँगूठा से दाब्यो तुम तनक, पाताल तक
धस्यो ऐसे भूलैं खल बढ़ि बड़ों के गुननकं
॥ १२ ॥

यद्दार्द्धिं सूत्राम्णो वरद परमोच्चैरपि स-
तीमधश्चक्रे बाणः परिजनविधेयत्रि-
भुवनः ॥ न तच्चित्रं तस्मिन् वरिवसित-
रित्वच्चरणयोर्न कस्याप्युन्नत्यै भव-
ति शिरस स्त्वय्यवनतिः ॥ १३ ॥

छाया

बड़ी ऊंची ऋद्धी सुरपतिहु की तुच्छ गनिके ॥
नहीं चाही बाणासुर भुवन तीनों बस कियो ॥
न अचरज है वा मे प्रगट वरदानी चरण में ॥
झुकाके शीशों को नहिं कौन प्रानी बढ़त
है ॥ १३ ॥

अकाण्डब्रह्माण्डक्षयचकितदेवासुर
कृपाविधेयस्यासीद्यस्त्रिनयन विषं सं
हृतवतः। सकल्माषः कण्ठे तव न कु
रुते न श्रियमहो विकारोपि श्लाघ्यो
भुवनभयभंगव्यसनिनः ॥ १४ ॥

छाया

अचानक दुनिया में प्रलय लखि देवासुर डरे
कृपा तेपी लीन्ह्यो तुम विष महा श्याम
ल वनो । गले मे सो शोभा करत पर पीड़
हरत जे चहै तन औगुन हो वह गुन वड़ा
लहत है ॥ १४ ॥

अिसिद्धार्था नैव क्वचिदपि सदेवासुरन-
रे निवर्तन्ते नित्यं जगति जयिनो
यस्य विशिखाः । स पश्यन्नीश त्वा
मितरसुरसाधारणमभूत् स्मरः स्मर्त-
व्यात्मा न हि वशिषु पथ्यः परिभवः॥
१५ ॥

छाया

बिना कीन्हे कारज नित मनुज देवासुरन्ह
में कभी नाहीं जाके फिरत विजयी बान जग
में । तुम्हैं ऐसो वैसो सुर समझि खोयो म-
दन तन जितेन्द्री के साथे अन भल किये
को भल लहै ॥ १५ ॥

महीपादाघाताद् व्रजति सहसा संशय
पदं॥पदं विष्णोर्भ्राम्यद्भुजपरिघरुग्न
ग्रहगणम्॥मुहुर्द्यौर्दौस्थ्यं यात्यनिभृ
तजटाताडिततटा॥जगद्रक्षायै त्वं नट
सि ननु वामैव विभुता॥१६॥

छाया

महो डगमग होवै युगल चरणों की धमक
सों॥गगन कांपै, सारे ग्रहगण कटैं, भुज भ्रम
ण सों॥जटा का छिटकाना ग्रसत सब ठिका
ना सरग को॥जगत रक्षा कारण जब तुम
रची नाच गहरी॥१६

वियद्व्यापी तारागणगुणितफेनोद्गम
रुचिः प्रवाहो वारां यः पृषतलघुदृष्टः
शिरसि ते जगद् द्वीपाकारं जलधि
वलयं तेन कृतमित्यनेनैवोन्नेयं धृत
महिमदिव्यं तव वपुः ॥ १७ ॥

छाया

चमकते हैं तारे जेहि उदक के फेनद्युति सों ॥
जगत को टापू सा जिन करि विजायठ समु
द्रंको। जटा में सो गंगा तव जल कनी सी
लगत हैं इसीसे सब जानैं तव तन धरे दि-
व्य महिमा ॥ १७ ॥

रथः क्षोणी, यंता शतधृतिरगेन्द्रो धनुरथो॥ रथांगे चंद्रार्कौ रथचरणपाणिः शर इति॥ दिधक्षोस्ते कोयं त्रिपुरतृणमाडम्बरविधि॥ र्विधेयैः क्रीडंत्यो न खलु परतंत्राः प्रभुधियः॥ १८॥

छाया

रथी ब्रह्मा, पृथ्वी रथ, धनु हिमाचल, शर हरी, ॥ सशी सूरज पहिये, तृण सम जलाने त्रिपुर को॥ न कोई त्यारी है यह रहस लीला स्वजन की॥ पराये के वश मे नहिं रहत इच्छा प्रभुन की॥ १८॥

हरिस्ते साहस्रं कमल बलिमादाय प-
दयो″र्यदेकोने तस्मिन् निजमुदहर
न्नेत्रकमलम्″गतो भक्त्युद्रेकः परिण-
तिमसौ चक्रवपुषा″त्रयाणां रक्षायै त्रि
पुरहर जागर्ति जगताम् ॥ १९ ॥

छाया

तुम्हारी पूजा की जब हरि सहस्रों कमल
सों″घट्यो इक दे दीन्ह्यो हरषि निज आंखी
पद्दुम को । बढ़ी भक्ती सोई सफलित महा
चक्र तनसों″त्रिलोकी की रक्षा लगि वह सदा
जागत रहै ॥ १९ ॥

क्रतौ सुप्ते जाग्रत्त्वमसि फलयोगे क्रतुमतां क्व कर्म प्रध्वस्तं फलति पुरुषाराधनमृते। अतस्त्वां संप्रेक्ष्य क्रतुषु फलदानप्रतिभुवं श्रुतौ श्रद्धां बध्वा दृढपरिकरः कर्मसु जनः ॥ २० ॥

छाया

समाप्ती यज्ञों के समय फलदाता हौ तुम्ही। बुझे क्या फल देवें करम, बिन पूजे पुरुषको। तुम्हें पक्का जामिन क्रतुफल मिलन में समझि कै क्रिया में वेदों में करत जन श्रद्धा सिमिटिकै ॥ २० ॥

(महिम्नस्तोत्र – अधिक पाठः –)

)(श्लोक २१ के बाद –)

"सतां वर्त्म त्यक्त्वा श्रुतिसमभिगम्यं सहभुवं ॥

घृणामप्युन्मूल्य स्वजनविषय स्नेहगुणितां ॥

द्विजः कृन्तन् पादे पितरमपराद्धं त्वयि विभो ॥

मनुष्यत्वं सद्यस्त्रिदशपरिणामेन विजहौ ॥ २२॥

क्रियादक्षो दक्षः क्रतुपतिरधीशस्त-
नुभृता मृषीणामार्त्विज्यं शरणद स-
दस्याः सुरगणाः ॥ क्रतुभ्रंशस्त्वत्तः
क्रतुफलदानव्यसनिनो ध्रुवं कर्तुः श्र-
द्धाविधुरमभिचाराय हि मखाः ॥२१॥

छाया

क्रिया ज्ञाता सब के प्रभु मखपती दक्ष
ठहरे ऋषी ऋत्विग् पाया सुरगण सभी स-
भ्य जिन के। फलों के दाताश्री शिव हुकुमते
यज्ञ विगरो अश्रद्धा कर्ता की शुभफल भलाई
हरतु है ॥ २१ ॥

प्रजानाथं नाथ प्रसभमभिकं स्वां दुहि
तरं गतं रोहिद्भूतां रिरमयिषु मृष्य-
स्य वपुषा॥ धनुष्पाणेर्यातंदिवमपि स-
पत्राकृतममुं त्रसन्तंतेद्यापि त्यजति-
न मृगव्याधरभसः ॥ २२ ॥

छाया

मृगी कन्या भागी, मृगमय पिताभोग भ्रम
सेंा मृगा धायो पीछे, तब तुम गह्यौ चांप कर
में॥ तिहारी शंकासों नहिं शरन पायो स-
रग में अभी लैं सोजाके सँग सँग अहेरी फि-
रतु है ॥ २२॥

स्वलावण्याशंसाधृतधनुषमह्नाय तृणवत्पुरः प्लुष्टं दृष्ट्वा पुरमथन पुष्पायुधमपि॥ यदि स्त्रैणं देवी यमनिरतदेहार्द्धघटनादवैतित्वामद्धा बत वरद मुग्धा युवतयः ॥ २३ ॥

छाया

जलो देख्यो आगे तृणसम धनुर्द्धर मदन को॥ कहै तो भी देवी तिय वश जितेन्द्री पुरुषको॥ यही यामें कारण तव अरध काया बसति हैं॥ सदा भूलैं बाला जिन्हहिँ ममता रूप छबिकी ॥ २३ ॥

श्मशानेष्वाक्रीडा स्मरहर पिशाचाः
सहचराश्चिताभस्मालेपः स्रगपि नृ-
करोटीपरिकरः ॥ अमंगल्यं शीलं
तव भवतु नामैवमखिलं तथाऽपि स्म-
र्तॄणां वरद परमं मंगलमसि ॥ २४ ॥

छाया

मसानों में खेलौ प्रभु तुम पिशाची दल
लिये चिता राखी लेपो मनुज शिर माला
लसतु हो सुनो हे वरदानीं तव प्रकृति सारी
अशुभ है तुम्हारे नामों को सुमिरत मिलै
मंगल सदा ॥ २४ ॥

मनः प्रत्यक्चित्ते सविधमवधायात्त-
मरुतः प्रहृष्यद्रोमाणः प्रमुदसलिलो-
त्संगितदृशः ॥ यदालोक्याल्हादं ह्र-
द इव निमज्यामृतमये दधत्यंतस्त-
त्वंकिमपि यमिनस्तत्किलभवान् २५

छाया

हटा के बाहर से, चित बिच लगावें मन मुनी विधी से प्राणों की पवन गति रोकें तब लखैं। अकथ सुखराशी को जनु सरसुधा-मध्य धसि के मगन होवैं योगी अलख हर सो तत्व तुम हौं ॥ २५ ॥

मूल

त्वमर्कस्त्वं सोमस्त्वमसि पवनस्त्वं हुतवहस्त्वमापस्त्वं व्योम त्वमु धरणिरात्मा त्वमिति च ॥ परिच्छिन्नामेवं त्वयि परिणता बिभ्रतु गिरं न विद्मस्तत्तत्त्वं वयमिह हि यत्त्वं न भवसि ॥ २६ ॥

छाया

तुम्ही आगी पानी रवि शसि तुम्ही मारुत तुम्ही तुम्ही धरती आतमा तव गगन हू रूप ठहरा ॥ यहीं तक कहते हैं अतिनिपुण जिनकी मति भली न जानूं सो स्वामी पशुपति न जो तत्व तुम हौ ॥ २६ ॥

त्रयीं तिस्रो वृत्तीस्त्रिभुवनमथो त्रीन-
पिसुरानकाराद्यैर्वर्णैस्त्रिभिरभिदधत्ती-
र्णविकृति ॥ तुरीयं ते धाम ध्वनिभि-
रवरुंधानमणुभिः समस्तंव्यस्तं त्वां
शरणदगृणात्योमिति पदम् ॥ २७ ॥

छाया

तुम्हीको गाताहै ध्रुव *अ उ म तीनों वरन से
त्रिवेदोंको तीनों सुर त्रिवृति तीनों भुवन
को ॥ किये धारण सब को कहत अति सु-
च्छिम ध्वनिलिये निराला माया ते तव अ-
कथ जो धाम चउथा ॥ २७ ॥

* ओंकार

भवः शर्वो रुद्रः पशुपतिरथोग्रः सह म-
हाँस्तथा भीमेशानाविति यदभिधा-
नाष्टकमिदम् ॥ अमुष्मिन्प्रत्येकं प्र-
विचरति देव श्रुतिरपि प्रियायास्मै
धाम्ने प्रणिहितनमस्योऽस्मि भवते २८

छाया

१ २ ३ ४ ५ ६
कहे सब ईशानो भव शरव भीमोग्र पशुपत
७ ८
महादेवो रुद्रः तवं सगुण नामाष्ट धरिके ॥
इन्हीं आठों में से निगम नित प्रत्येक
पदको जपै मनवानी सों श्रुतिप्रिय तुम्है
नित नमतुहैं ॥ २८

नमो नेदिष्ठाय प्रियदव दविष्ठाय च
नमो नमः क्षोदिष्ठाय स्मरहर महि-
ष्ठाय च नमः ॥ नमो वर्षिष्ठाय त्रि-
नयन यविष्ठाय च नमो ॥ नमः सर्व-
स्मै ते तदिदमिति शर्वाय च नमः २९

छाया

समीपी को बंदौं नमहुं बहुदूरे वसत जो ॥
नमो अति सुच्छिमको नमहुं बड़रूपी पुरुष
को ॥ नमौं चिर बूढे को तरुण तर को मैं न-
मतुहौं ॥ धरै सब रूपों को वह शरव मुँहिते
नमित है ॥२९ ॥

बहुलरजसे विश्वोत्पत्तौ भवाय नमो
नमः प्रबलतमसे तत्संहारे हराय नमो
नमः ॥ जनसुखकृते सत्त्वोद्रिक्तौ मृ
डाय नमो नमः प्रमहसि पदे निस्त्रै
गुण्ये शिवाय नमो नमः ॥ ३० ॥

छाया

सृष्टी रचीं रज बढाय नमों भवाय पाल
करो सत समेत नमो मृड़ाय ॥ तमसे हरो
हत भक्त नमो हराय तीनों गुनों रहित रूप
नमः शिवाय ॥ ३० ॥

1 (श्लोक 31 के बाद –)

"वपुःप्रादुर्भावादनुमितं मिदं जन्मनि पुरा ॥
पुरारे न क्वापि क्षणमपि भवन्तं प्रणतवान् ॥
नमन् मुक्तः स प्रत्यहमतनुरग्रेऽप्यनतिमान् ॥
इतीश क्षन्तव्यं तदिदमपराधद्वयमपि ॥ 33॥"

क्रुशपरिणति चेतः क्लेशवश्यं क्व चेदं ॥
क्व च तव गुणसीमोल्लंघिनी शश्वदृद्धिः॥
इति चकितममंदीकृत्य मां भक्तिराधाद्वरद चरणयोस्ते वाक्यपुष्पोपहारम् ॥ ३१ ॥

छाया

विषय विवश दुःखी चित्त मेरा विचारा ॥
वरद अटल ऋद्धी पार नाहीं गुनोंका ॥ डरत मैं,
तिहारी भक्तिने थाह दीन्ह्यो रखत रचि
सुबानी पुष्पमाला पदों में ॥ ३१ ॥

अमितगिरिसमं स्यात्कज्जलं सिंधुपात्रे
सुरतरुवरशाखा लेखनी, पत्रमुर्वी ॥
लिखति यदि गृहीत्वा शारदा सर्व
कालं तदपि तव गुणानामीश पारं न
याति ॥ ३२ ॥

छाया

अमर विटप शाखा लेखनी, शैल काल
सम करि कजली को सिन्धुके बीच घोलै लि
खहिं यदि धरापै सर्व्वदा शारदाजी तबहुं
तव गुनों का पार होवै न स्वामी ॥ ३२ ॥

"अहरहरनवद्यं धूर्जटेः स्तोत्रमेतत् ॥
पठति परमभक्त्या शुद्धचित्तः पुमान् यः ॥
स भवति शिवलोके रुद्रतुल्यस्तथाऽत्र ॥
प्रचुरतरधनायुः पुत्रवान् कीर्तिमाँश्च ॥" ३६॥

"महेशान्नापरो देवो, महिम्नो नापरा स्तुतिः ॥
अघोरान्नापरो मंत्रो नास्ति तत्वं गुरोः परम्" ॥३७

"दीक्षा दानं तपस्तीर्थं ज्ञानं यागादिकाः क्रियाः ॥
महिम्नस्तवपाठस्य कलां नार्हन्ति षोडशीम् ॥ ३८

"आसमाप्तमिदं स्तोत्रं पुण्यं गन्धर्वभाषितम् ॥
अनौपम्यं मनोहारि शिवमीश्वरवर्णनम् ॥ ३९

त्रे असुरसुर[illegible]न्द्रैरर्चितस्येंदुमौलैर्ग्रथित-

॥ गुणमहिम्नो निर्गुणस्येश्वरस्य ॥ सक-

ं- लगुणवरिष्ठः पुष्पदंताभिधानो रुचिर-

न मलघुवृत्तैःस्तोत्रमेतच्चकार ॥ ३३ ॥

छाया

ाकल समय सोहैं भाल में चन्द्रमा जी ॥

ुर असुर नृपों से पूज्य हैं पाँव जाके । अ-

ुन सगुन जिनमें नित्य कीन्हे बसेरा पुहुप-

दं कवीने स्तोत्र ताको बनाया ॥ ३३ ॥

कुसुमदशननामा सर्वगंधर्वराजः शि
शशधरमौलेर्देवदेवस्य दासः ॥ सख
लु निजमहिम्नो भ्रष्टएवास्यरोषात्
वनमिदमकार्षीद्दिव्यदिव्यं महिम्न
॥ ३४ ॥

छाया

नवल शशकधारी पादको दास भारी ॥ क
विवर गुनभ्राजा सर्ब्ब गंधर्ब्ब राजा ॥ नि
गुरु महिमा के कोप से जो गिरा था ॥ वि
नय यह बनाया पुष्पदन्तावनी में ॥ ३४

सुरवरमुनिपूज्यं स्वर्गमोक्षैकहेतुं" पठ-
ति यदि मनुष्यः प्रांजलिर्नान्यचेताः॥
व्रजति शिवसमीपं किन्नरैः स्तूयमानः॥
स्तवनमिदममोघं पुष्पदंतप्रणीतम्३५

छाया

अमर मुनि बखानैं मुक्तिको भेदजानें" मृदु-
ल भजन सांचा दिव्य गंधर्व वाचा। यदि
नर कर जोड़े चित्त की एकता से॥ पढहिं
सुख कमावें शंभु को लोक पावैं॥ ३५॥

मूल

महेशान्नापरो देवो महिम्नो नापरास्तु

तिः ॥ अघोरान्नापरो मंत्रो नास्ति त

त्त्वं गुरोः परम् ॥ ३६ ॥

छाया

न देवता वृद्ध महेश ते परे॥महिम्न ते अ

स्तुति हैं सभी तरे ॥ अघोर ते मंत्र परे न

कोई॥बड़ा सभीते गुरु तत्त्व होई ॥ ३६ ॥

(- अधिक पाठ -)

"श्रीपुष्पदन्त मुख पंकज निर्गतेन ॥
स्तोत्रेण किल्बिषहरेण हरप्रियेण ॥
कण्ठस्थितेन पठितेन समाहितेन ॥
सुप्रीणितो भवति भूतपतिर्महेशः ॥" ४२

"इत्येषा वाङ्मयी पूजा श्रीमच्छंकरपादयोः ॥
अर्पिता तेन देवेशः प्रीयतां श्रीसदाशिवः" ४३

"तव तत्त्वं न जानामि कीदृशोऽसि महेश्वर ॥
यादृशोऽसि महादेव तादृशाय नमो नमः ॥" ४४

"एककालं द्विकालं वा त्रिकालं यः पठेन्नरः ॥
सर्वपापविनिर्मुक्तः शिवलोके महीयते ॥" ४५ ॥